चिंतन - मानवीय प्रवृत्तियों का साक्षात्कार

सुधीर ओखदे
जलगाँव(महाराष्ट्र)425002
सेल -9867537659
ईमेल -ssokhade@gmail.com

आज का मानवीय समाज जिस, क्रूर, असंतोष और ईर्ष्या के दौर से गुजर रहा है उसके कारण किसी भी संवेदनशील व्यक्ति का मानसिक संतुलन बिगड़ जाना सामान्य बात है। स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद हमने किन्हीं मूल्यों का ह्रास होते देखा है तो वे है, मानवीय मूल्य। वस्तुओं के मूल्य आसमान छू रहे हैं लेकिन हमारे नैतिक मूल्य गिरते जा रहे हैं। आज हमारे पतन की वह सीमा हो गई है जहां विश्वास, प्रेम, अपनत्व एवं सौहार्द्र की भावना का लुप्त हो जाना सहज स्वाभाविक है।

आज समाचारों में, बम विस्फोट में सैकड़ों लोगों के मरने की खबर हमें विचलित नही करती। किसी सम्पूर्ण परिवार की नृशंस हत्या को हम किसी परीलोक की कथा की तरह पढ़कर बिसरा देते हैं। किसी दूसरे प्रदेश मे लगी आग की आंच हम महसूस नही करते, बल्कि उससे उठने वाले धुएं से हम आशंकित रहते हैं कि कहीं पराई आग मे हमारा नुकसान न हो जाए।

प्रश्न ये उठता है कि हमारे बीच 'पराया' शब्द आया कहां से। जब देश गुलाम था तब हम सब एक थे। हिंदुस्तानी थे। गर्व महसूस करते थे अपनी भारतीयता पर। लेकिन आज हम बंट गए हैं। हम भारतीय नही बल्कि मराठी, पंजाबी, मद्रासी और कश्मीरी बन गए हैं। फिर क्या बात है जब हम विभाजित ही हो चुके हैं तब कश्मीर की आग हमे क्यों विचलित करेगी! पंजाब में हुई नृशंस हत्याएं तो हमे रोमांचित ही करेंगी न? मुंबई मे हुए बम विस्फोट तो हमे किसी सिनेमा के सीन ही लगेंगे। लेकिन ये जो कुछ चल रहा है क्या वह किसी भी देश की सुव्यवस्था को विचलित करने के लिए काफी नहीं है?

कुछ दिन पूर्व की बात है। मध्य प्रदेश में इंदौर के समीप हुई बस दुर्घटना मे मेरे नज़दीकी रिश्तेदारों के मृत्यु के समाचार ने मुझे अंदर तक हिला दिया। उस वीभत्स दुर्घटना का मुझे नज़दीक से साक्षात्कार हुआ, क्योंकि दुर्घटनाग्रस्त लोग मेरे रिश्तेदार थे। लेकिन पहले उस दुर्घटना की खबर से मैं विचलित नही हुआ था, क्योंकि इस प्रकार की दुर्घटनाएं तो रोजमर्रा की बातें हो गई हैं। उस दुर्घटना को भी मैने अपने सम्पूर्ण परिवार के साथ टीवी पर देखा था, रेडिया में सुना था, समाचार पत्रों में पढ़ा था। लेकिन उस वक्त चूंकी वह सिर्फ एक समाचार था हमारे लिए अत: उसकी तह में जा कर उसका चिंतन एवं मनन करने की हमने जरूरत नहीं समझी। रोज ही तो बसें दुर्घटना ग्रस्त होती हैं, रोज ही तो लोग मरते हैं। किन-किन की खबर लें। लेकिन चूंकि प्रस्तुत दुर्घटना मे मरने वाले मेरे रिश्तेदार थे अत: वह दुर्घटना मुझे व्यथित कर गयी।

स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वतंत्रता पश्चात के भारत मे ज़मीन-आसमान का अंतर है। एक वह समय था जब अपने देश की आज़ादी के लिए हर घर से एक व्यक्ति का बलिदान अलिखित रूप से स्वीकार कर लिया गया था। माताएं अपने पुत्रो को स्वयं उस आग मे झौंकने को तैयार रहती थीं क्योंकि उस वक्त सिर्फ उन्माद था, उद्देश्य था और मंजिल थी। आखिर मंजिल हमने प्राप्त कर ही ली। भारत स्वतंत्र हुआ। लोगों ने गुलामी से मुक्त अपने देश की माटी की गंध को महसूस किया। हमारा राष्ट्र प्रजातांत्रिक व्यवस्था का राष्ट्र कहलाया।

प्रजातंत्र की न जाने कितनी परिभाषाएं हैं। लेकिन जिस परिभाषा ने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया है वह एक घटना है। कहते हैं पंडित नेहरू आगरा के समीप किसी गांव में भाषण दे रहे थे तभी एक नवयुवक भरी सभा में क्रोधित मुद्रा में खड़ा हुआ और उसने नेहरू जी से पूछा ''आपने इस देश के लिए किया ही क्या है? नेहरू जी ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया, ''तुम्हारी यह पूछने की मुझसे हिम्मत हुई। यही क्या कम किया है।''

सच है प्रजातंत्र मे एक साधारण सा व्यक्ति भी राष्ट्र के सर्वोच्च पद पर बैठे हुए व्यक्ति से किसी भी प्रकार का प्रश्न पूछने का अधिकार रखता है और उच्च पदस्थ व्यक्ति भी उसका जवाबदेह रहता है।

लेकिन कहीं आज हम उस अधिकार का दुरूपयोग तो नही कर रहें है? कहीं किसी भी प्रकार का आरोप राष्ट्र के सर्वोच्च पद के व्यक्ति पर लगा कर हम अपने अधिकारों का दुरूपयोग तो नही कर रहें हैं?

दुख इस बात का नहीं है कि कोई व्यक्ति राष्ट्र के सर्वोच्च शिखर पर बैठे व्यक्ति पर भ्रष्टाचार का आरोप लगाता है, बल्कि क्षोभ तो इस बात का है कि हमारे जैसा सामान्य व्यक्ति उसे एकदम ठीक मान लेता है। आखिर उसे उस शिखर पर बिठाया किसने? आखिर हम से गलती कहाँ पर हुई? क्यों हम किसी गंभीर विषय पर चिंतन मनन करने के बजाय उसे रसीली चर्चा का विषय बनाने मे लगे हैं? क्यों हमारी आत्मा इन खबरों से विचलित नहीं होती?

इसका जवाब सिर्फ एक है- यांत्रिकता और आर्थिक बोझ। आज हमारा जीवन यांत्रिकता से परिपूर्ण हो गया है। हम आज हर संबंध को व्यावसायिकता की दृष्टि से देखते है। करूणा, दया, मोह, ममता से हम दूर होते जा रहा हैं। हम आत्म केंद्रित होते जा रहे हैं। हमारी दुनिया सिर्फ हमारा परिवार है ऐसी भावना को आज बल मिल रहा है। ये विस्फोट की स्थिति है। मानवीय समाज के लिए यह भयावह स्थिति है जहां व्यक्ति सिर्फ अपने लिए जीना चाहता है। आज की व्यवस्था ने व्यक्तियों के अंदर जो 'डर' की भावना को जन्म दिया है वह सम्पूर्ण मानव जाति के लिए अभिशाप है।

आज डर ही वह प्रमुख मुद्दा है जिसे दूर किया जाना आवश्यक है। आज की शिक्षा एवं व्यवस्था ने हमे हतना डरपोक बना दिया है कि वह दिन दूर नही जब मानवीय सम्बंध सिर्फ डर पर आधारित होंगे। हर व्यक्ति एक दूसरे से डरता हुआ नज़र आएगा। फिर क्यों वह दूसरों के दुख से व्यथित होगा और क्यों दूसरों की खुशी में प्रसन्न होगा।